सक्ताः कर्मण्यविद्वांसो यथा कुर्वन्ति भारत।
कुर्याद्विद्वांस्तथासक्तश्चिकीर्षुर्लोकसंग्रहम् ॥२५॥

सक्ताः – आसक्त; कर्मणि – नियत कर्मों में; अविद्वांसः – अज्ञानी; कुर्वन्ति – करते हैं; भारत – हे भारतवंशी; कुर्यात् – करना चाहिए; विद्वान – विद्वान; तथा – उसी तरह; असक्तः – अनासक्त; चिकीर्षुः – चाहते हुए भी,

इच्छुक; लोक-संग्रहम् – सामान्य जन |

Text

जिस प्रकार अज्ञानी-जन फल की आसक्ति से कार्य करते हैं, उसी तरह विद्वान जनों को चाहिए कि वे लोगों को उचित पथ पर ले जाने के लिए अनासक्त रहकर कार्य करें |

गीता भूषण टीका

यद्यपि तुम एक परिनिष्ठ भक्त हो और ज्ञान में स्थित हो फिर भी वेद वर्णित अपने नियत कर्मों को लोगों के कल्याण के लिए करो | यह इस श्लोक का तात्पर्य है :

जैसे अज्ञानी लोग फल की आशा से कर्म करते हैं वैसे ही ज्ञानी व्यक्ति को अनासक्त होकर के उन कर्मों को करना चाहिए |

Purport

एक कृष्णभावनाभावित मनुष्य तथा कृष्णभावनाभाहीन व्यक्ति में केवल इच्छाओं का भेद होता है | कृष्णभावनाभावित व्यक्ति कभी ऐसा कोई कार्य नहीं करता जो कृष्णभावनामृत के विकास में सहायक न हो | यहाँ तक कि वह उस अज्ञानी पुरुष की तरह कर्म कर सकता है जो भौतिक कार्यों में अत्यधिक आसक्त रहता है | किन्तु

इनमें से एक ऐसे कार्य अपनी इन्द्रियतृप्ति के लिए करता है, जबकि दूसरा कृष्ण की तुष्टि के लिए | अतः कृष्णभावनाभावित व्यक्ति को चाहिए कि वह लोगों को यह प्रदर्शित करे कि किस तरह कार्य किया जाता है और किस तरह कर्मफलों को कृष्णभावनामृत कार्य में नियोजित किया जाता है |

न बुद्धिभेदं जनयेदज्ञानां कर्मसङ्गिनाम् ।
जोषयेत्सर्वकर्माणि विद्वान्युक्तः समाचरन् ॥२६॥

न – नहीं; बुद्धिभेदम् – बुद्धि का विचलन; जन्येत् – उत्पन्न करे; अज्ञानाम् – मूर्खों का; कर्म-संगिनाम् – सकाम कर्मों में; जोषयेत् – नियोजित करे; सर्व – सारे; कर्माणि – कर्म; विद्वान् – विद्वान व्यक्ति; युक्तः – लगा

हुआ; समाचरन् – अभ्यास करता हुआ।

Text

विद्वान व्यक्ति को चाहिए कि वह सकाम कर्मों में आसक्त अज्ञानी पुरुषों को कर्म करने से रोके नहीं ताकि उनके मन विचलित न हों। अपितु भक्तिभाव से कर्म करते हुए वह उन्हें सभी प्रकार के कार्यों में

लगाए (जिससे कृष्णभावनामृत का क्रमिक विकास हो)।

गीता भूषण टीका

इसके साथ ही जो ज्ञानी पुरुष है उस लोक हित का ध्यान रखते हुए बड़े ध्यानपूर्वक कर्म करने चाहिए। यद्यपि व्यक्ति ज्ञान में निष्ट हो सकता है अर्थात वह परिनिष्ट भक्त हो सकता है फिर भी उसे उन मूर्खों की बुद्धि को विचलित नहीं करना चाहिए जिनकी मुर्खता वश कर्ममार्ग में श्रद्धा है।

वे लोग जो कर्म मार्ग में श्रद्धा रखते हैं उन लोगों के मन को यह कह कर विचलित नहीं करना चाहिए की "यह कर्तव्य करने से क्या होगा ? तुम मेरी तरह ज्ञान का अनुशीलन करके सफलता को प्राप्त करो|"

अपितु स्वयं नियत कर्मों में ध्यानपूर्वक नियोजित होकर और सभी अंगों को पूर्ण रूपेण आचरण करके उस प्रेम से अज्ञ लोगों को उनके

सभी कर्तव्यों में नियोजित करना चाहोये जैसा शास्त्र में वर्णन है |

यदि उनकी बुद्धि विचलित हो जाती है तो उनकी अपने कर्तव्यों पर से भी श्रद्धा टूट जायेगी और इस प्रकार वे ज्ञान भी प्राप्त नहीं कर पायेंगे | इस प्रकार दोनों ही पक्षों पर वे पराभव को प्राप्त होंगे |

परन्तु यह भी कहा गया है की :

स्वयं निःश्रेयसं विद्वान् न वक्त्य् अज्ञाय कर्म हि
न राति रोगिणो ’पथ्यं वाञ्छतो ’पि भिषक्तमः

भक्तियोग में दक्ष शुद्ध भक्त कभी भी मूर्ख पुरुष को भौतिक सुख के लिए सकाम कर्म करने का उपदेश नहीं देगा, ऐसे कार्यों में सहायता करना तो दूर रहा। ऐसा भक्त उस अनुभवी वैद्य के समान है, जो रोगी के चाहने पर भी

उसे ऐसा पथ्य ग्रहण करने के लिए प्रोत्साहित नहीं करता जो उसे स्वास्थ्य के लिए हानिकारक हो।

श्रीमद भागवतम 6.9.50

भगवान् विष्णु का यह वाक्य उन लोगों के लिए उपयुक्त है जो कर्ममार्ग में पहले से ही आसक्त न हों |

अन्वितार्थ प्रकाशिका

स्वयमिति । या स्वयम निःश्रेयसं परमानन्दप्राप्तिसाधनं भगवद्भजनं

विद्वान जानाति सः अज्ञाय जनाय कर्म दुःखकारणविषयप्राप्तिसाधनं न हि वक्ति। तदुपदेशमपि नैव करोति तत्समपादनमं तु दूरतः । यथा भिषक्तमः सद्वैद्यो हि अपथ्यं वाञ्छतोऽपि रोगिणो यथा तन्न राति न ददाति तद्वत् ॥6.9.50 ॥

Purport

वेदैश्च सर्वैरहमेव वेद्यः – यह सिद्धान्त सम्पूर्ण वैदिक अनुष्ठानों की पराकाष्ठा है | सारे अनुष्ठान, सारे यज्ञ-कृत्य तथा वेदों में भौतिक कार्यों के लिए जो भी निर्देश हैं उन सबों समेत सारी वस्तुएँ कृष्ण को जानने के निमित्त हैं जो हमारे जीवन के चरमलक्ष्य हैं | लेकिन चूँकि बद्धजीव इन्द्रियतृप्ति के अतिरिक्त और कुछ नहीं जानते, अतः वे वेदों का

अध्ययन इसी दृष्टि से करते हैं। किन्तु सकाम कर्मों तथा वैदिक अनुष्ठानों के द्वारा नियमित इन्द्रियतृप्ति के माध्यम से मनुष्य धीरे-धीरे कृष्णभावनामृत को प्राप्त होता है, अतः कृष्णभावनामृत में स्वरुपसिद्ध जीव को चाहिए कि अन्यों को अपना कार्य करने या समझने में बाधा न पहुँचाये, अपितु उन्हें यह प्रदर्शित करे कि किस प्रकार सारे कर्मफल को कृष्ण की सेवा में समर्पित किया जा सकता है।

कृष्णभावनाभावित विद्वान व्यक्ति इस तरह कार्य कर सकता है कि इन्द्रियतृप्ति के लिए कर्म करने वाले अज्ञानी पुरुष यह सीख लें कि किस तरह कार्य करना चाहिए और आचरण करना चाहिए | यद्यपि अज्ञानी पुरुष को उसके कार्यों में छेड़ना ठीक नहीं होता, परन्तु यदि वह रंचभर भी कृष्णभावनाभावित है तो वह वैदिक विधियों की परवाह न करते हुए सीधे भगवान् की सेवा में

लग सकता है। ऐसे भाग्यशाली व्यक्ति को वैदिक अनुष्ठान करने की आवश्यकता नहीं रहती, क्योंकि प्रत्यक्ष कृष्णभावनामृत के द्वारा उसे वे सारे फल प्राप्त हो जाते हैं, जो उसे अपने कर्तव्यों के पालन करने से प्राप्त होते।